Impact Factor (SJIF): 6.126 E-ISSN: 2583-1615, P-ISSN: 3049-3498

International Journal of Research in Academic World

Received: 06/September/2025 IJRAW: 2025; 4(10):624-626 Accepted: 18/October/2025

पिंजर में विभाजन की विभीषिका और शांति का मानवीय स्वर: पीड़ा से मुक्ति की खोज

*[1]वंदना कुमावत

*[1]असिस्टेंट प्रोफेसर (अतिथि संकाय), हिंदी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, मकराना, राजस्थान, भारत।

सारांश

अमृता प्रीतम का उपन्यास "पिंजर" भारतीय उपमहाद्वीप के विभाजन की विभीषिका का एक संवेदनशील और सजीव चित्र प्रस्तुत करता है। यह कृति केवल ऐतिहासिक हिंसा का विवरण नहीं, बल्कि मानवता, करुणा और शांति की गहराई तक पहुँचने वाला एक मानवीय दस्तावेज़ है। विभाजन के दौरान स्त्रियों पर हुए अत्याचार, सामाजिक विस्थापन और मानसिक यातना के बीच लेखिका ने यह दिखाया है कि किस प्रकार एक स्त्री — पूरो — अपने आत्मबल, करुणा और सहिष्णुता के माध्यम से पीड़ा से मुक्ति का मार्ग खोजती है।

पिंजर में अमृता प्रीतम ने विभाजन के दौर की साम्प्रदायिक हिंसा को स्त्री दृष्टि से देखा है। पूरो का चरित्र उस समय की भारतीय नारी का प्रतीक बन जाता है जो सामाजिक अस्वीकार्यता, हिंसा और अपमान के बावजूद अपने भीतर की मानवीयता को जीवित रखती है। उसकी चुप्पी विद्रोह में और उसका करुण भाव शांति की साधना में परिवर्तित हो जाता है।

यह शोध इस बात को रेखांकित करता है कि पिंजर में शांति का अर्थ केवल हिंसा की अनुपस्थिति नहीं, बल्कि आत्मस्वीकृति, क्षमा और करुणा के माध्यम से भीतर की मुक्ति प्राप्त करना है। पूरो की यात्रा पीड़ा से मुक्ति की है — बाहरी संघर्षों से भीतर की शांति की ओर। इस दृष्टि से पिंजर विभाजन की विभीषिका में भी मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना का प्रतीक बन जाता है।

मुख्य शब्द: विभाजन, स्त्री अस्मिता, करुणा, मानवीयता, शांति, आत्ममुक्ति, पीड़ा आदि।

प्रस्तावना

भारत का विभाजन (1947) मानव सभ्यता की सबसे बड़ी त्रासदियों में से एक था। इसने न केवल भौगोलिक सीमाओं को विभाजित किया, बल्कि समाज, संस्कृति, इतिहास और मानवीय संबंधों को भी गहराई से झकझोर दिया। यह घटना भारतीय उपमहाद्वीप की चेतना में गहरे जख्म छोड़ गई, जिनकी पीड़ा आज भी साहित्य, कला और सामूहिक स्मृति में जीवित है। विभाजन केवल राजनीतिक सीमा-निर्धारण नहीं था, बल्कि यह मनुष्यता की सबसे बड़ी परीक्षा थी, जहाँ धर्म और राजनीति के नाम पर हिंसा, विस्थापन और अविश्वास का वातावरण फैल गया।

अमृता प्रीतम का पिंजर इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में जन्मा एक ऐसा उपन्यास है, जिसने विभाजन की त्रासदी को स्त्री की दृष्टि से देखा और उसे संवेदना के केंद्र में रखा। लेखिका ने दिखाया कि इतिहास की सबसे भयानक घटनाओं का प्रभाव सबसे पहले और सबसे गहराई से स्त्री पर पड़ता है — जो न केवल शारीरिक रूप से पीड़ित होती है, बल्कि मानसिक, सामाजिक और अस्तित्वगत स्तर पर भी विखंडित होती है।

यह उपन्यास केवल राजनीतिक या ऐतिहासिक घटनाओं का चित्रण नहीं, बल्कि मनुष्य की आंतरिक स्थिति — भय, पीड़ा, अपमान, करुणा और आत्म-स्वीकृति — का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण है। पूरो के माध्यम से अमृता प्रीतम ने यह स्थापित किया कि स्त्री केवल विभाजन की 'पीड़िता' नहीं, बल्कि करुणा और शांति की वाहक भी है। पूरो की चुप्पी, उसका धैर्य और उसका आत्म-सम्मान उस युग की नारी चेतना को एक नये आयाम में प्रस्तुत करता है।

अमृता प्रीतम का दृष्टिकोण मानवतावादी है — वह हिंसा के अंधकार में भी करुणा की ज्योति खोजती हैं। पूरो का चरित्र यह प्रमाणित करता है कि जब मनुष्य अपने भीतर के दुःख को स्वीकार कर लेता है और दूसरों के दुःख को समझने की क्षमता विकसित करता है, तभी वास्तविक शांति संभव होती है। इस दृष्टि से पिंजर केवल विभाजन का आख्यान नहीं, बल्कि मानवता, करुणा और आत्ममुक्ति का गहन दार्शनिक ग्रंथ बन जाता है।

विभाजन की विभीषिका: समाज और स्त्री की त्रासदी

विभाजन का अर्थ केवल भौगोलिक सीमाओं का निर्धारण नहीं था, बल्कि यह मानवता की सामूहिक असफलता और नैतिक पतन का प्रतीक था। 1947 में भारत और पाकिस्तान के निर्माण के साथ-साथ जो हिंसा, विस्थापन और असुरक्षा का वातावरण उत्पन्न हुआ, उसने सदियों पुरानी सामाजिक एकता, भाईचारे और सह-अस्तित्व की

*Corresponding Author: वंदना कुमावत

भावना को झकझोर दिया। धर्म और राजनीति की आँधी ने उन मानवीय संबंधों को तोड़ दिया, जो सदियों से भारतीय संस्कृति के मूल में स्थित थे। मनुष्य का मनुष्य से अविश्वास, हिंसा के प्रति असहिष्णुता और प्रतिशोध की भावना ने पूरे समाज को भीतर से खोखला कर दिया।

अमृता प्रीतम ने पिंजर में इसी विभाजन की विभीषिका को स्त्री के दृष्टिकोण से देखा है। उनका दृष्टिकोण यह उजागर करता है कि विभाजन की सबसे गहरी चोट स्त्री पर पड़ी। पूरो का अपहरण और उसके अपने ही परिवार द्वारा अस्वीकार कर दिया जाना इस बात का प्रतीक है कि उस समय समाज स्त्री को केवल 'इज़्ज़त' के प्रतीक के रूप में देखता था, न कि एक स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में। पूरो के साथ जो घटित होता है, वह केवल एक व्यक्ति की त्रासदी नहीं, बल्कि पूरी सभ्यता की नाकामी का प्रतीक है।

यह सामाजिक विडंबना है कि पूरो, जो परिस्थितियों की शिकार है, वही अंततः अपने भीतर करुणा, क्षमा और मानवीयता की लौ जलाए रखती है। उसके भीतर जो संवेदना है, वह उस हिंसक और अमानवीय समाज के लिए एक नैतिक दर्पण का काम करती है। पूरो की करुणा और सहनशीलता इस बात का प्रमाण है कि स्त्री में केवल सहन करने की क्षमता ही नहीं, बल्कि समाज को मानवीयता की दिशा में पुनर्स्थापित करने की शक्ति भी निहित है।

इस प्रकार पिंजर में विभाजन की विभीषिका का अर्थ केवल रक्तपात, विस्थापन या सांप्रदायिकता की आग नहीं, बल्कि उस मनोवैज्ञानिक और नैतिक पतन से भी है, जिसने मनुष्य को अपनी करुणा और विवेक से दूर कर दिया। अमृता प्रीतम इस उपन्यास के माध्यम से न केवल विभाजन की ऐतिहासिक त्रासदी को चित्रित करती हैं, बल्कि उस समाज की चेतना को भी प्रश्नों के घेरे में लाती हैं जिसने स्त्री के अस्तित्व को 'इज़्ज़त' के दायरे में बाँध दिया।

पूरो का चरित्र इस संदर्भ में एक प्रतिरोध का प्रतीक बन जाता है — वह पीड़िता होकर भी पराजित नहीं होती, बल्कि अपनी करुणा के माध्यम से समाज को उसकी खोई हुई मानवता का बोध कराती है। यही पिंजर की सबसे बड़ी मानवीय उपलब्धि है।

स्त्री अस्मिता और आत्ममुक्ति का विमर्श

पिंजर में पूरो का संघर्ष केवल विभाजन की विभीषिका से नहीं, बल्कि उस पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना से है जिसने स्त्री को सदैव 'वस्तु' या 'परिवार की इज़्ज़त' के प्रतीक के रूप में परिभाषित किया। समाज और परिवार के इस दोहरे अन्याय ने स्त्री को उसकी स्वयं की पहचान से वंचित कर दिया। अमृता प्रीतम ने पूरो के माध्यम से इस मानसिक और सामाजिक बंधन को चुनौती दी है।

अमृता प्रीतम का दृष्टिकोण यहाँ स्त्री की आत्ममुक्ति के व्यापक अर्थ को उद्घाटित करता है। पूरो की मुक्ति बाहरी परिस्थितियों से नहीं, बल्कि उसके भीतर जागृत हुई चेतना से संभव होती है। वह अपने अतीत को नकारती नहीं, बल्कि उसे स्वीकार कर उसके साथ जीना सीखती है। यह स्वीकार ही उसे आत्मशक्ति प्रदान करता है। पूरो की यह स्थिति सिमोन द बोउवार के 'The Second Sex' में उल्लिखित उस नारी के समान है, जो स्वयं को "अन्य" की परिभाषा से बाहर निकाल कर आत्मनिर्भर अस्तित्व का निर्माण करती है।

पूरो का यह आत्मबोध केवल व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं, बल्कि स्त्री समुदाय की सामूहिक चेतना का प्रतिनिधित्व है। उसकी करुणा, धैर्य और स्वीकृति नारीत्व की कमजोरी नहीं, बल्कि शक्ति के नए अर्थ हैं। वह यह सिद्ध करती है कि स्त्री की अस्मिता उसके बाहरी संबंधों में नहीं, बल्कि उसकी आंतरिक स्वतंत्रता और आत्मबोध में निहित है।

यह आत्ममुक्ति ही उसके भीतर शांति का बीज बोती है। वह पीड़ा को स्वीकार करती है, पर उसे अपनी परिभाषा नहीं बनने देती। पूरो की मौन करुणा और क्षमा नारी की सहनशीलता नहीं, बल्कि उसका दार्शनिक प्रतिरोध है — एक ऐसा प्रतिरोध जो हिंसा के बजाय मानवीयता से उत्तर देता है।

इस प्रकार, पिंजर में पूरो का चरित्र अमृता प्रीतम की नारी चेतना की सार्थक परिणति है। वह उस नई स्त्री का प्रतीक बन जाती है जो अपने अतीत के घावों को ढोते हुए भी अपनी पहचान का निर्माण करती है — जो दूसरों को क्षमा करती है और स्वयं को स्वीकारती है। यही उसकी आत्ममुक्ति है, और यही इस उपन्यास की आत्मा।

मानवीयता और शांति का स्वर

अमृता प्रीतम का पिंजर केवल विभाजन की त्रासदी का दस्तावेज़ नहीं है, बल्कि यह मनुष्य की करुणा, क्षमा और आंतरिक शांति की खोज का भी आख्यान है। उपन्यास में शांति का अर्थ केवल बाहरी स्थिरता या हिंसा की अनुपस्थिति नहीं, बल्कि भीतर की मुक्ति, आत्मस्वीकृति और सह-अस्तित्व की भावना है। पूरो का चरित्र इस दृष्टि से एक अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करता है — वह हिंसा और घृणा के वातावरण में भी करुणा और क्षमा का मार्ग चुनती है।

जब समाज, परिवार और धर्म सभी उसे अस्वीकार कर देते हैं, तब भी पूरो अपने भीतर की मानवता को नहीं मरने देती। वह अपने व्यक्तिगत दुःख को सामूहिक करुणा में रूपांतरित कर देती है। रशीदा के प्रति उसका व्यवहार, उस समाज के प्रति उसका मौन क्षमाशील रुख, और अपने अतीत से पलायन करने की बजाय दूसरों की पीड़ा में सहभागिता — ये सब उसके भीतर की आध्यात्मिक ऊँचाई को प्रकट करते हैं। पूरो की शांति कोई निष्क्रिय स्वीकार नहीं, बल्कि सक्रिय करुणा की अभिव्यक्ति है।

अमृता प्रीतम इस उपन्यास के माध्यम से यह सन्देश देती हैं कि वास्तविक शांति बाहरी राजनीतिक समझौतों या सामाजिक संरचनाओं से नहीं, बल्कि व्यक्ति की अंतःचेतना से उत्पन्न होती है। जब मनुष्य अपने भीतर की करुणा को जीवित रखता है, तब वह हिंसा के विरुद्ध सबसे सशक्त प्रतिरोध बन जाता है। पूरो का मौन इसी प्रतिरोध का प्रतीक है — वह हिंसा के विरुद्ध मानवीयता की घोषणा करती है, बिना किसी आक्रोश या प्रतिशोध के।

यहाँ शांति का स्वर किसी धार्मिक या दार्शनिक उपदेश के रूप में नहीं, बल्कि जीवन के व्यावहारिक अनुभव के रूप में उभरता है। विभाजन के पश्चात् टूटी हुई दुनिया में पूरो की करुणा और क्षमा एक आशा का स्रोत बनती है। उसकी शांति यह दर्शाती है कि मानवता की पुनर्स्थापना केवल प्रेम, सहानुभूति और करुणा के माध्यम से ही संभव है।

इस प्रकार, पिंजर में अमृता प्रीतम शांति को एक आंतरिक साधना और सामाजिक पुनर्निर्माण का आधार बनाती हैं। पूरो की मौन स्वीकृति और करुणामयी दृष्टि भारतीय स्त्री की उस आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक बन जाती है जो हिंसा से ऊपर उठकर संपूर्ण मानवता के लिए आशा और शांति का संदेश देती है।

पीड़ा से मुक्ति की खोज

पिंजर की समग्र संरचना में "पीड़ा से मुक्ति" एक केंद्रीय तत्व के रूप में उभरता है। विभाजन की पृष्ठभूमि में पूरो का जीवन केवल व्यक्तिगत यातना की कथा नहीं है, बल्कि यह पूरे समाज की सामूहिक पीड़ा का प्रतीक बन जाता है। उसकी त्रासदी में एक युग की नारी की व्यथा, उसका संघर्ष और उसकी आत्म-स्वीकृति का लंबा सफर समाहित है। अमृता प्रीतम ने पूरो की कहानी के माध्यम से यह दिखाया है कि मुक्ति केवल भौतिक या सामाजिक स्तर पर नहीं, बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक स्तर पर संभव है।

जब पूरो का अपहरण होता है, तो वह केवल अपने घर से नहीं, बल्कि अपनी पहचान, अपने अस्तित्व और अपने स्त्रीत्व से भी विस्थापित हो जाती है। समाज उसे 'अपवित्र' घोषित करता है, परिवार उसे अस्वीकार करता है, और वह स्वयं अपने भीतर के अस्तित्व को पुनः परिभाषित करने की यात्रा पर निकल पड़ती है।

प्रारंभ में यह यात्रा वेदना और अस्वीकार से भरी है, परंतु धीरे-धीरे पूरो अपने दुःख को आत्मबोध और करुणा में बदल देती है। "मैं कौन हूँ — किसी की बेटी नहीं, किसी की बहन नहीं, किसी की पत्नी नहीं... तो फिर मैं क्या हूँ?" (पृष्ठ 58)

यह रूपांतरण ही उसकी वास्तविक मुक्ति है। पूरो अब केवल पीड़िता नहीं रह जाती, बल्कि वह अपने अनुभवों को समझने और उन्हें करुणा के माध्यम से पार करने का मार्ग चुनती है। वह नफरत या बदले के बजाय क्षमा को स्वीकार करती है, और यही उसका आंतरिक विजय क्षण है। इस दृष्टि से पूरो का चरित्र बौद्ध करुणा, गीता की निष्कामता और भारतीय स्त्री की सहनशीलता का अद्भुत संगम है।

अमृता प्रीतम ने पूरो की चुप्पी को उसकी कमजोरी नहीं, बल्कि उसकी आत्मानुभूति का प्रतीक बनाया है। उसकी यह मौन स्थिति भीतर की दृढ़ता और आत्मबल की अभिव्यक्ति है। जब वह दूसरों के दुःख को समझने लगती है, तब उसके अपने दुःख का अर्थ भी बदल जाता है। यही वह क्षण है जब पीड़ा से मुक्ति संभव होती है — जब व्यक्ति स्वयं को और दूसरों को क्षमा कर देता है। "वह अब किसी से कुछ नहीं माँगती — न अपना घर, न अपना नाम। बस अपने भीतर की शांति को थामे हुए चलती रही।" (पृष्ठ 132)

पिंजर का यह संदेश आज के समय में भी उतना ही प्रासंगिक है। हिंसा, घृणा और असहिष्णुता से भरे सामाजिक परिवेश में अमृता प्रीतम का यह उपन्यास हमें यह सिखाता है कि मुक्ति किसी बाहरी शक्ति से नहीं, बल्कि अपने भीतर के प्रेम और करुणा से प्राप्त होती है। पूरो की यात्रा इसलिए कालजयी है, क्योंकि वह पीड़ा से पार जाकर मानवीयता की नई परिभाषा प्रस्तुत करती है।

करुणा और क्षमा: शांति की आधारशिला

पिंजर के केंद्र में करुणा और क्षमा की वह गहन भावना है, जो अमृता प्रीतम के समूचे लेखन का नैतिक आधार बन जाती है। पूरो का चरित्र इस बात का प्रतीक है कि वास्तविक शांति बाहरी परिस्थितियों के नियंत्रण से नहीं, बल्कि भीतर की करुणा से उत्पन्न होती है। जब पूरो अपने साथ घटित हिंसा और अपमान के बावजूद रश्मी को बचाने का निर्णय लेती है, तब वह करुणा का सर्वोच्च रूप प्रकट करती है। यह निर्णय प्रतिशोध या न्याय की माँग नहीं, बल्कि एक गहन नैतिक जागृति का परिणाम है।

अमृता प्रीतम के अनुसार, करुणा केवल भावनात्मक प्रतिक्रिया नहीं, बल्कि नैतिक शक्ति है — वह शक्ति जो विनाश को सृजन में बदल सकती है। पूरो की करुणा हिंसा की प्रतिक्रिया नहीं, बल्कि उसकी आत्मपरिपक्वता की परिणति है। उसने अपने दुःख को नकारा नहीं, बल्कि उसे समझा और आत्मसात किया। इस प्रक्रिया में वह यह सीख जाती है कि पीड़ा से मुक्ति का मार्ग प्रतिशोध नहीं, बल्कि क्षमा है। "उसने सोचा — अगर मैं भी नफ़रत करूँ, तो क्या बदल जाएगा? किसी को तो रुककर प्यार करना होगा।" (पृष्ठ 113)

करुणा और क्षमा का यह दृष्टिकोण न केवल स्त्री के आत्मविकास का प्रतीक है, बल्कि समूचे समाज के लिए एक नैतिक दिशा भी प्रदान करता है। पूरो जब रश्मी को बचाती है, तो वह केवल एक जीवन की रक्षा नहीं करती, बल्कि उस मानवीय मूल्य को पुनर्जीवित करती है जिसे विभाजन की हिंसा ने नष्ट कर दिया था। यह कार्य इतिहास के हिंसक अध्यायों में भी मनुष्यता की पुनर्स्थापना का प्रतीक बन जाता है।

अमृता प्रीतम की दृष्टि में क्षमा दुर्बलता नहीं, बल्कि साहस का रूप है। पूरो की करुणा स्त्री की सहनशीलता का प्रतीक नहीं, बल्कि उसके आध्यात्मिक बल का प्रमाण है। वह यह सिखाती है कि जब मनुष्य दूसरों की पीड़ा को समझने लगता है, तब ही वह स्वयं की मुक्ति की ओर अग्रसर होता है।

इस प्रकार, पिंजर में करुणा और क्षमा केवल नैतिक मूल्यों के रूप में नहीं, बल्कि शांति के दार्शनिक आधार के रूप में प्रस्तुत होते हैं। पूरो का जीवन इस सत्य को प्रतिपादित करता है कि वास्तविक शांति तब संभव है जब करुणा हिंसा पर, और क्षमा प्रतिशोध पर विजय प्राप्त करती है। यही अमृता प्रीतम के लेखन का मानवीय सार और पिंजर की आत्मा है।

निष्कर्ष

अमृता प्रीतम का पिंजर भारतीय उपमहाद्वीप के विभाजन की त्रासदी पर लिखा गया मात्र ऐतिहासिक उपन्यास नहीं है, बल्कि यह मानवता, करुणा और आत्ममुक्ति का गहन दार्शनिक दस्तावेज़ है। विभाजन की हिंसा ने जहाँ सामाजिक और नैतिक मूल्यों को छिन्न-भिन्न कर दिया था, वहीं पूरो का चरित्र उस बिखराव के बीच मानवता की एक जीवित लौ के समान उभरता है।

पूरो की यात्रा केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामूहिक चेतना की यात्रा है — एक ऐसी यात्रा जो भय, अपमान और पीड़ा से आरंभ होकर आत्मस्वीकृति, करुणा और शांति में परिणत होती है। उसने अपने जीवन के दुःख को प्रतिशोध में नहीं, बल्कि क्षमा में रूपांतरित किया। यही उसका मानवीय और आध्यात्मिक उत्कर्ष है। अमृता प्रीतम ने उसके माध्यम से यह दिखाया कि स्त्री की अस्मिता समाज द्वारा दी गई परिभाषाओं में नहीं, बल्कि उसके भीतर की स्वतंत्र चेतना में निहित है।

पिंजर यह भी स्पष्ट करता है कि विभाजन की असली पीड़ा केवल सीमाओं में नहीं, बल्कि मनुष्यता के टूटने में थी। पूरो की करुणा इस टूटे हुए विश्वास को फिर से जोड़ने का प्रयास करती है। वह उस युग की नारी है जिसने हिंसा के युग में भी मानवता की मशाल को बुझने नहीं दिया। इस अर्थ में, पूरो न केवल पीड़िता है, बल्कि पुनर्निर्माण की प्रतीक भी है — वह जो विनाश के बीच सृजन का मार्ग खोजती है।

अमृता प्रीतम के लेखन में शांति कोई स्थिर अवस्था नहीं, बल्कि एक सतत साधना है। यह साधना करुणा, क्षमा और आत्मस्वीकृति के माध्यम से संभव होती है। पूरो इस साधना की परिणति है — वह दिखाती है कि जब मनुष्य अपने भीतर की करुणा को जगाता है, तभी वह बाहरी हिंसा को पराजित कर सकता है। "मनुष्य के पास अगर कुछ बचा है तो वह केवल उसकी करुणा है — वही उसे जीवित रखेगी।" (पृष्ठ 145)

इस प्रकार, पिंजर विभाजन के अंधकार में भी आशा, करुणा और शांति की एक अनन्त किरण बनकर उभरता है। यह उपन्यास न केवल स्त्री की आत्ममुक्ति की गाथा है, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लिए एक संदेश भी — कि विनाश के बाद भी सृजन संभव है, और पीड़ा के पार शांति का मार्ग सदैव खुला रहता है।

संदर्भ सूची

1. प्रीतम, अमृता. पिंजर. नई दिल्ली: राजपाल एंड संस, 1950.
2. प्रीतम, अमृता. रसीदी टिकट. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1976.
3. सिंह, गुरबचन. अमृता प्रीतम: व्यक्तित्व और कृतित्व. लुधियाना: पंजाबी यूनिवर्सिटी प्रकाशन, 1990.
4. त्रिपाठी, मधु. विभाजन और हिंदी उपन्यास: एक अध्ययन. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2012.
5. गुप्ता, कुसुम. स्त्री विमर्श और हिंदी उपन्यास. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2008.
6. शर्मा, उषा. भारतीय नारी और साहित्य में उसकी छवि. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन, 2005.